हर्मन जेकोबीना लेखनो जवाब

•

ले. पं. गम्भीरविजय गणि

॥ ई८० ॥

ॾ नमो वीतरागाय ॥

स्वस्थानश्री भावनगर पन्यास गम्भीरविजयगणिप्रक्रान्तोऽथ प्रोफेसर जेकोबीयें जे श्रीआचाराङ्गनो तरजुम्मो करतां बीजा श्रुतस्कन्ध मध्ये अध्ययन-२ना उद्देशो-१०, सूत्रपाठ-२ना तरजुम्मा विषे-

"सिया णं परो बहुअट्ठिएण मंसेण वा मच्छेण वा उवणिमंतिज्जा" इत्यादि सूत्रपाठनो अर्थ- बहु हाडकावाला मांस तथा बहु कांटावाला मच्छें करी कदाचित् गृहस्थ आमन्त्रण करें - इत्यादिक प्रकारें कर्यो छे, ते आ अर्थ आ स्थलमां घणो विपरीत नथी, पण तेमने भोगक्रियानो विषयप्रमुख समझाणो नथी. तेथी केटलोक विपरीत छे तेनो खुलासो नीचे मुजब जुओः

प्रथम तो जैन शास्त्रोनो अर्थ गुरुगमनें आधीन रह्यो छे. तेथी स्वतन्त्रपणें एकला न्यायें के व्याकरणना बलथी यथार्थ कोईथी बनी शकतो नथी. वास्ते ज घणा आगमोमां कह्यो छे:

"गुरुमइऽहीणा सव्वे सुत्तत्था - गुरुमत्यधीनाः सर्वे सूत्रार्थाः" इत्यादि. वास्ते आ सूत्रना अर्थमां पण गुरुगमनी जरूरता छे. तेथी वृत्तिकारो पण विस्तारना भयथी कदि अक्षरार्थ मुकी देय छे, तोहि तेओं गुरुगम भागनी दिशिनो दर्शावतो करें छे. वास्ते वृत्तिकार भगवानें अक्षरार्थ तो आ सूत्रनो कर्यो नथी पण तेमने जे दिशि दर्शावेली छे ते दिशिना अनुसारथी अर्थ जे मुजब थाय छे ते अर्थ आ छे :

प्रथम तो **सिया णं** आ पदनो अर्थ तेमने घणा सम्बन्धवालो सूचव्यो छे जे - "**सिया णं** - स्यात् कदाचित् क्वचिदेव महारोगावस्थायां प्रचुरधर्महान्यां सञ्जायमानायां सत्यां भिक्षुः कुशलवैद्योपदेशेन यद्यस्पर्शनीयमपि (नीयस्याऽपि) मांसस्य स्पर्शने समुद्भूतप्रयोजनवान् स्यात् तदा ज्ञानाद्यर्थी सन् तं गवेषयेत् । गवेषयंश्च साधोः परो-भिक्षुसमूहादन्यो गृहस्थः" ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आ स्थलें **स्यात्** - कोईक ज कालमां, पण जेवि तेवि वखत्तें नहि. **क्वचिदेव** - कोइक ज महारोगनी प्राप्तिमां पण हरेक रोगमां नही. **महारोगावस्थायां** ते लूता नामे महारोगनी अवस्थामां. आ लूतारोग जेने कोइने पूर्वे करेला कर्मना उदयथी थाय छे तेना शरीरमां रुंआडे रुंआडे अति सूक्ष्म जीवांत उपजी जाय छे. तेथी हंमेस रसी स्रव्यां करे छे. खुजाल-बलतरा पण घणी होय. तेथी करीनें ज्ञानध्यानादिक थइ शके नहि.

प्रचुरधर्महान्यां सञ्जायमानायां सत्यां - तेथी पोतानें अति घणी ज धर्मनी हानि थातें सतें. आ स्थले धर्महानिनो हेतु ते पोताना शरीरमांथी जे रसी वहे छे ते ज छे. केम जे जिनागममां कह्यो छे के जो पोताना शरीरमांथी पण रसी-रुधिर-परु विगेरे जिहां सुधी निकलता होय तिहां सूधी अस्वाध्याय छे. तेथी ज्ञाननो उच्चार जरातरा पण करवो नहि, ने जो करे तो ज्ञानविराधक थाय. एटले ज्ञाननो फल न पामे ने सामो संसार वधे एवो निषेध होवाथी ज्ञानाभ्यास तेनें सदा रोकाय छे. केम जे लूतावाला दरदीने शरीरे रसि सदा रहे छे माटे.

भिक्षुः - साधु जे ते रोगनी उपशान्ति थवा वास्तें **कुशलवैद्योपदेशेन** - ते रोगनी निवृत्तिना उपायमां कुशल-हुसियार होय एवा वैद्यना केहेणे करीनें जे ते वैद्यें कह्यो होय के साधुजी तुमो आ औषध लेइने रांधेला मांस उपर नाखीनें ते मांसथी जेटलो लूतावालो अङ्ग होय तेटला सर्व अङ्गने प्रस्वेदित करजो (परसेववो), तेथी मटि जासे. ए प्रकारे वैद्यना कहेवाथि किं वा पोताना के अनेरा साधुना जाणपणाथी ते दरदी साधु,

यद्यस्पर्शनीयमपि - जो पण साधुओनें मांसनो स्पर्श करवो (तेने अडवो) वाजबि नथि, तो पण **मांसस्पर्शने** - मांसने अडवा विषे **समुद्भूत प्रयोजनवान् स्यात्** - उपज्यो छे स्पर्श करवानो गाढो प्रयोजन (कारण) जेने एवो थाय, **तदा** - ति वारे, **ज्ञानाद्यर्थी सन्** - ज्ञानाभ्यासनी ध्याननी संयमप्रमुखनी वृधिनो अर्थी - कामनावालो थयो सतो, तं - ते मांस प्रतें, **गवेषयेत्** - मांसभोजी गृहस्थोंने घरे तेनी तलास करवा निकले. **गवेषयँश्च** - तेनी तलास वास्तें फिरतां सतां, **साधोः** - ते साधुने.

आ प्रथम कहेल सर्व अर्थना समुदायने संग्रहीने चालता सूत्रनी आदिमा एक **स्यात्** शब्द बेसो छे ते प्रोफेसर जेकोबी गुरुगम विना जाणी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

शक्या नहि तेथी अर्थनो अनर्थ समझाणो छे. ने ते ज कारणथी **पाशचन्द्रादिकें** पण फलादिक अर्थ लखीने उत्सूत्रभाषण रूप अनर्थ कर्या छे. ए **स्यात्**-पदनो अर्थ संपूर्ण थयो.

हवे **पर** शब्दनो अर्थ : ते गवेषणा करतां साधुनें **परो = भिक्षुसमूहादन्यो गृहस्थः** - पर, जे साधुओना समुदायथी अनेरो अर्थात् गृहस्थ ते **बहुअट्ठिएण मंसेण वा = बह्वस्थिकेन मांसेन वा** - घणा हाडवाला मांसे करीने, वा-अथवा, **मच्छेण = मत्स्येन बहुकण्टकेन** - घणा कांटावाला मच्छें करीने, **उवणिमंतिज्जा = उपनिमन्त्रयेत्** - आमन्त्रणा करे,

आउसंतो समणा ! = आयुष्मन् श्रमण ! - हे चिरंजीवी साधु !, **अभिकंखसि = त्वमिच्छसि** - तुमो इच्छसो, **पडिगाहित्तए = प्रतिग्रहीतुं** - ग्रहण करवानें, **बहुअट्ठियं मंसं = अस्मद्गृहे बह्वस्थिकं मांसं** - अमारा घरमां घणा हाडवालो मांस छे, **एतप्पगारं णिग्घोसं सोच्चा = तस्यैतत्प्रकारकं निर्घोषं श्रुत्वा** - तेनो एवा प्रकारनो वचन सांभलीने, **णिसम्म = निशम्य** - मन साथें विचारी, **से = सः साधुस्तं मांसं** - ते साधु ते मांस प्रतें, **पुव्वामेव आलोएज्जा = ग्रहणात् पूर्वमेवाऽऽलोकयेत्** - ग्रहण कर्याथी पहेलां ज नजरें जोवे,

आउसो त्ति वा = आयुष्मन्नित्येवं - हे चिरंजीवि ! एवा प्रकारे, **वा** = अथवा, **भइणि त्ति वा =भगिनीति वा** - हे बाई - ए प्रकारें, **णो खलु मे कप्पति बहुअट्ठितं मंसं पडिगाहित्तए = बह्वस्थिकं मांसं मम ग्रहितुं न कल्पते** - घणा हाडकावालो मांस म्हारे ग्रहण करवा योग्य नथि - ए प्रकारें देनार प्रतें कहीने वलि कहे, **अभिकंखसि मे दाउं = यदि त्वं मम दातुमभिकाङ्क्षसि** - जो तु मने देवा इच्छे छे तो, **जावतितं तावतितं पोग्गलं दलियाहि = यावन्मात्रं पुद्गलं तावन्मात्रं देहि** - जेटलो मांस मात्र छे तेटलो दे, **मा अट्ठियाइं = अस्थिकानि मा देहि नाऽस्ति मे बहुना प्रयोजनं,** - हाडकाओ म दे, म्हारे घणानो काम नथी.

"से सेवं वदंतस्स परो अभिहट्टु अंतो पडिग्गहगंसि बहुअट्ठियं मंसं परिभाएत्ता णिहट्टु दलएज्जा" ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

से परो = स परो गृहस्थः – ते पर जे मांस देनार गृहस्थ जन, **से = तस्य** – ते साधुने, **एवं वदंतस्स = एवं वदमानस्य** – प्रथम जनावेली रीतें केहनारा साधुना, **अंतो अभिहट्टु = अन्तरभिहृत्य** – समीपें आवीनें, **बहुअट्ठियं मंसं परिभाएत्ता = बह्वस्थिकं मांसं धर्मद्वेषादिभावेन साधुदानाय परिभाज्य** – घणा हाडवाला मांस प्रतें साधुना धर्म उपर द्वेष परिणामादिकें करीने, **णिहट्टु = निहृत्य** – बलात्कारे करी, **पडिग्गहगंसि = काष्ठच्छब्विकादौ** – लाकडानी काचली प्रमुखमा, **दलएज्जा = दद्यात्** – देवा मांडे, **तहप्पगारं = पडिगाहगं = तथाप्रकारकं प्रतिग्राह्यं** – तेवा प्रकारना ग्राह्य पदार्थनें,

"परहत्थंसि वा परपायंसि वा अफासुयं अणेसणिज्जं लाभे संते जाव नो पडिगाहेज्जा" ।

परहत्थंसि = गृहस्थहस्तस्थं – घरना धनीना हाथमां रह्यो, **वा** – अथवा, **परपायंसि = गृहिभाजनस्थं** – घरधनीना भाजनमां रह्यो ज, **अफासुयं = तद्गतास्थ्यादित्यागेनाऽन्यजीवहिंसाहेतुकं** – ते मांहिला हाडकादिक नाखवाथी अनेरा कीडी-कुंथु प्रमुख जीवोंनी हिंसानुं कारण छे माटे, **अणेसणिज्जं = ईप्सितप्रयोजनायामनेषणीयं** – पोतानी इच्छित कार्यनी सिद्धिमा नहि इच्छवा लायक, **लाभे संते = लब्धे सति** – मिलते छतें पण, **णो पडिगाहेज्जा = न प्रतिगृह्णीयात्** – न लेयसे,

आहच्च पडिगाहिए सिया = स पूर्वोक्तोऽयोग्यमांस (तत् पूर्वोक्तमयोग्यमांसम्) **आहत्य गृहीतः स्यात्** – ते प्रथम कहेलो अजोग मांस सहसात्कारें नाखी देवाथी लेवाय गयो होय तो, **तन्नो हित्ति वएज्जा** = साधु देनारनें **हा धिक** ए प्रकारे न कहे – क्रोधरूप छे माटे, **णो अणिहि त्ति वएज्जा** = हे अजाण – एम पण न कहे,

से तमायाय = ते साधु ते मांस लेईने, **एगंतमवक्कमेज्जा** = एकांत प्रदेशे जाय, अहे = नीचे घनी उंडान सूधी दग्ध थयेली एवी, **आरामंसि वा** = वननी भूमि, **उवस्सयंसि वा** = कोई मकाननी भूमि जेमां, **अप्पंडए** = कीडी प्रमुखना इंडा न होय, **जाव संताणए** = यावत् शब्दथी बीज-अंकुरा-घास-उदेहि-जीवातना दर-पाणी-करोलीया जाल प्रमुख न होय तिहां,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मंसगं मच्छगं भोच्चा = मांसमात्रं वा मत्स्यमात्रं भोक्ता (भुक्त्वा ?) – लूतादूषितदेहप्रदेशस्वेदनं संयोजयित्वा, न तु भक्षित्वा – मांसमात्रने अथवा मच्छमात्रने भोगवीने, एटले लूता रोगथी व्यापेला देहविभाग प्रते परसेवावीने, पण खाइने नही; हाड–कांटाओने लइने एकांते, एटले निरजीव दग्ध भूमिप्रदेशे नाखे, तथा मांसें करी वारंवार स्वेदवो रह्यो छे वास्ते तेनो त्याग सूत्रमा न कह्यो, निष्प्रयोजन थयें परिठववानो छे माटे.

ए प्रकारें आ सूत्रना अक्षरार्थ थाय छे तिवारे जे प्रोफेसर जेकोबीयें **भोगक्रियानो अर्थ भक्षण कर्यो ते क्रियानो विषय बाहिर कर्मोना उपयोगमां लेवानो छे, एम न समझवाथी लिख्यो ते असत्य छे.** ने तेथी ज **जैनी पूर्वकालमा मांसाहारी हता – ए लिखाण पण असत्य छे.** केम जे तीर्थंकरोनो अवतार अवश्य राजकुलमा होय, कदि अनेरे कुले अवतरे तो इन्द्र गर्भने पालटीनें राजकुलमें मुके ए नियम छे. पण कांई जैनी राजाओना कुलमा ज अवतरें छे ने परणे छें एवो नियम जैन शास्त्रोमां नथी.

एटलो तो नियम छे जे तीर्थंकर घरवास रहे तो हि धर्मविरुद्ध वस्तु पोते आचरे नही, तेम ज जिहां लगें तेमने केवलज्ञान उपज्यो न होय तिहां लगे परने धर्म–उपदेश पण देय नहि – एवो तेमनो अवश्य आचार जैन शास्त्रोमां कह्यो छे. तेथी जादवों श्रावक हता एवो विवाह वखतें कइ शकाय नहि.

तथा अमोइ उपर लख्या मुजब जे आ सूत्रनो अक्षरार्थ कर्यो छे ते वृत्तिकार भगवानना आशयना आधारथी. ते वृत्तिपाठ लिखिइं छे :

एवं मांससूत्रमपि नेयम् । अस्य चोपादानं क्वचिल्लूताद्युपशमनार्थं सद्वैद्योपदेशतो बाह्यपरिभोगेन स्वेदादिना ज्ञानाद्युपकारकत्वात् फलवद् दृष्टम् । भुजिश्चाऽत्र बहिः परिभोगार्थे, नाऽभ्यवहारार्थे, पदातिभोगवदिति च्छेदसूत्रेष्वपि प्रायो द्रष्टव्यम् । एवं गृहस्थामन्त्रादिविधि–पुद्गलसूत्रमपि सुगममिति । तदेवमादिना च्छेदसूत्राभिप्रायेण ग्रहणे सत्यपि कण्टकादिप्रतिष्ठापन(परिष्ठापन)विधिरपि सुगम इति ।

एनो संक्षेपथी भावार्थ एम छे : **एवं** – जेम प्रथम सेलडी ने सींगोना

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सूत्रनो अक्षरार्थ कर्यो छे तेम, **मांस सू०** – मांसना सूत्रनो पण अक्षरार्थ जानी लेजो.

अस्य चो० – आ मांसादिक ग्रहण ते क्वचित् – कोइक ज कालमा कोइ महान् कार्य अटकी पडवाथी करवामा आवे. स्या माटे ? ते कहे छे : **लूता०** – लूता नामे रोग थयो होय तो तेनी उपशान्तिने अर्थे, लूतानो स्वरूप प्रथम लिख्यो छे ते, आदि-शब्दथी एज आचारांग सूत्रना पेहला श्रुतस्कन्धमा निर्युक्तिकारें तथा टीकाकारें घणी जातीना रोग वर्णव्या छे, तेमां लूता जेवा होय ते लेवा.

ते वास्तें पण, **सद्वैद्योपदेशतः** – सांचो कुशल उत्तम वैद्यना केहवाथी-औषधनी मेलवनी बतावाथी, ते रीते पण, **बाह्यपरिभोगेन स्वेदादिना** – तेनो शरीर उपर उपभोग लेवें करीनें, ते ए रीतें तेथी दरद उपर परसेवो उपजावेवे करीने. एम पण अशुचिनो भोग शा वास्तें – ते कहे छे – **ज्ञानाद्यु०** ज्ञानध्यानादिकनी वृद्धिरूप उपकार करे छे माटे ते भोग जीवनें शुभ फलकारी कह्यो छे.

भुजिश्चाऽत्र बहिः परिभोगार्थे – आ ठेकाने भोगक्रिया जे **भोच्चा** शब्द सूत्रमा कह्यो छे ते बाहिर एटले शरीरना उपरला भोगोमां लेवा रूप अर्थमां वर्त्ते छे, **नाऽभ्यवहारार्थे** – पण खावाना अर्थमा आ ठेकाणे भोगक्रिया वर्त्तती नथी; केम जे श्री**दशवैकालिक** सूत्रना पांचमा अध्ययनथी लेईने (**प्रश्नव्याकरण**-प्रमुख सूत्रोमा कह्यो छे के- जे साधु-प्रमुख दारु-मांसादिक शरीरने मस्तकारी पदार्थ खाय ते मायावी अपयशें, लोकनिन्दनाइं, विडम्बनाइं पीडातो, धर्मभ्रष्ट, देव-गुरुनी आराधनाथी चुक्यो, मरण वखतें पण धर्मवासना पामे नही; तो विचारी जुओ जे खावानो अर्थ केम घटे ?

तथा दारु-मांसनी वात तो रही पण **बृहत्कल्प-व्यवहारादिक** छेदसूत्रोंना निर्युक्ति-भाष्योमां कह्यो छे के-जे साधु डुंगली, लसन, सूरण, बटाटां, रींगणा, गाजर, मूला, सकरकंद, आदु-प्रमुख अनुचित वस्तुना शाक-चटणी विगेरें राधेला तइयार निरारंभी शुद्ध मिल्यो छे एम जाणीने लेइने खाय तो तेने महानिध्वंस परिणामि कह्यो छे, तेने गुरु चौमासी-दंड लिख्यो छे ने तमोगुणी कह्यो, तिवारें मांस खावा वात क्यां रही ? अपितु क्यांहिं पण न होय माटें

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

बाहिर भोग अर्थ जे टीकाकारें कर्यो ते सत्य छे.

ते बहिर्भोग अर्थनें दृष्टान्तथी दृढ करे छे : **पदातिभोगवदिति** - जेम पालो = सिपाइ भोग छे तेम कोई कहे - **अस्मद्भोग्योऽयं पदातिः** - आ सिपाई अमारा भोगनो छे एटलें अमारा काममा आवे छे, तेम ते मांस साधुना काममा आव्यो माटे भोग छे, **इति** = ए प्रकारे, **च्छेदसूत्रेष्वपि द्रष्टव्यं** = कहेल कारणोथी बहिर्भोगमां मांस लेवानो **बृहत्कल्पादि** च्छेदसूत्रोंमां पण कह्यो छे.

एवं गृहस्थामन्त्रणादिविधिपुद्गलसूत्रमपि सुगममिति = एम टीकामा दर्शावेल शैली मार्गे करीने गृहस्थ करी आमन्त्रणादिक, तेना विधिनो सूत्रनो तथा पुद्गल जे मांसना सूत्रनो पण व्याख्यान सुगम थयो, **इति** = ए प्रकारे, **एवमादिना** = इत्यादि कारणे करीने, **च्छेदसूत्राभिप्रायेण** = छेदसूत्रोना आशय जाणवें करीनें, **ग्रहणेऽपि** = बहू हाडकावालो मांस लिवानो होय तो पण, **कण्टकादिपरिष्ठापनविधिरपि सुगम** = इति कांटादिक परिठववानो विधि पण कहेली शैलीइं सुगम छे इम जाणवो.

श्रीशीलाङ्काचार्यें आ टीका विक्रम संवत् ६७८नी शालमा संपूर्ण करी छे, केम जे तेमने शाकी संवत् ७९८ लिख्या छे ते शाकी राजा विक्रमथी १२० वर्ष पहेलां थया छे. एम आ टीका रचाई १२७८ वर्ष थया, ने आ टीकाथी पेलां आचारांगनी संक्षेप टीका **श्रीगन्धहस्तिसूरि**कृत इति. ते टीका-मिश्र आ टीका तेमने करी छे. तेथी सिद्ध थाय छे के पूर्वे पण जैनी साधु मांसाहारी न हता.

ने ए आचार्य महासत्यवादी हता ए पण सिद्ध थाय छे. केम जे जिनागमोमां एकास्थिक-बह्वस्थिक फलादिक कह्या छे. तेथी ए आचार्य महाशक्तिमान् फलादिरूपे व्याख्या करवा समर्थ छे ते पण असत्यवचनना पापथी डरीने करी नहि, तेथी महासत्यवादी छे ए सिद्ध छे.

ने आ सूत्रनो बालबोध करनार **पाशचन्द** संवत् १५७२ मा निकलेल, तेने कुल वर्ष ३८३ थया छे, ते जिनोक्त भाव अन्यथा करवाना तथा असत्यभाषीपणाना पापथी नही डरतें फलादिरूप अर्थ कर्यो ते अनर्थ छे.

तस्मान्नमः सत्यवादिने ॥ श्री ॥ श्री ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org